यूनाईटेड बैंक ऑफ इण्डिया

बनाम

सिद्धार्थ चक्रबर्ती

27 अगस्त, 2007

(न्यायमूर्ति डा. अरिजीत पसायत एवं न्यायमूर्ति डी.के. जैन)

औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947-धारा 33(2)(ख) और उसका परन्तुक-कर्मचारी की बर्खास्तगी-औद्योगिक विवाद के लंबित रहने के दौरान- बर्खास्तगी आदेश से इंगित हो रहा है कि विवाद के लंबित होने को देखते हुये धारा 33(2)(ख) का प्रार्थना पत्र प्रस्तुत किया जाना-औद्योगिक न्यायाधिकरण के द्वारा बर्खास्तगी आदेश को सही ठहराया गया-उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश व खण्ड पीठ ने अभिनिर्धारित किया कि कर्मचारी पूर्ण बकाया मजदूरी के साथ बहाली का अधिकारी है-अपील पर बहाली का आदेश न्यायोचित होना अभिनिर्धारित किया गया-प्रकरण के तथ्यों में बकाया मजदूरी की मात्रा दो लाख रूपये तक सीमित-नियोक्ता को धारा 33(2)(ख) की शर्तों के अनुसार कार्यवाही करने की अनुमति।

प्रत्यर्थी-कर्मचारी को नियोक्ता बैंक द्वारा सेवा से बर्खास्त किया गया-बर्खास्तगी आदेर्श इंगित करता है कि औद्योगिक विवाद के लंबित होने को देखते हुये अपीलार्थी बैंक द्वारा की गई कार्यवाही के अनुमोदन के लिये औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 33(2)(ख) के तहत

आवेदन दायर किया जा रहा था-प्रत्यर्थी ने एक औद्योगिक विवाद उठाया, जिसमें औद्योगिक न्यायाधिकरण को निर्दिष्ट प्रश्न धारा 33(2)(ख) के प्रावधानों की पालना नहीं करने के लिये श्रम न्यायालय में कार्यवाही लंबित रहने तक बर्खास्तगी आदेश की वैधता व मान्यता थी। न्यायाधिकरण ने बर्खास्तगी आदेश को सही ठहराया। इसके विरुद्ध रिट याचिका में उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश ने अभिनिर्धारित किया कि कर्मचारी पूर्ण बकाया मजदूरी सहित बहाली का हकदार है। एकल न्यायाधीश के आदेश को उच्च न्यायालय की खण्डपीठ के द्वारा सही ठहराया गया।

इस न्यायालय को की गई अपील में अपीलार्थी बैंक ने अन्य बातों के साथ-साथ तर्क दिया कि पूर्ण बकाया मजदूरी का भुगतान उचित नहीं था, और बैंक को धारा 33(2)(ख) के तहत कार्यवाही करने की स्वतन्त्रता दी जानी चाहिये।

आंशिक रूप से अपील को स्वीकार करते हुये, न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि- 1. औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 33(2)(ख) का परन्तुक एक कर्मकार को उसके हितों की रक्षा के लिए सुरक्षा प्रदान करता है और यह औद्योगिक विवाद के लंबित रहने के दौरान नियोक्ता द्वारा उत्पीड़न और अनुचित श्रम संव्यवहार के खिलाफ एक ढाल की प्रकृति में है, ऐसा होने से, उच्च न्यायालय की खंडपीठ द्वारा पुष्टी किया गया एकल न्यायाधीश का निर्णय किसी भी दुर्बलता से ग्रस्त नहीं है। (पैरा 7) (502-डी, ई)

2. प्रकरण के विशिष्ट तथ्यों और पृष्ठभूमि को ध्यान में रखते हुये जिसमें प्रत्यर्थी के विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्रवाई की गई थी, और कानून की स्थिति जैसा कि प्रासंगिक समय पर थी, बर्खास्तगी का आदेश पारित किया गया था, बकाया मजदूरी की मात्रा दो लाख रुपये तक सीमित है। यदि कोई राशि पहले ही भुगतान की जा चुकी है, तो उसे भुगतान की जाने वाली निर्देशित राशि से काट लिया जाएगा। (पैरा 12) (503-सी, डी)

पी.जी.आई. मेडिकल एजूकेशन एण्ड रिसर्च, चंडीगढ़ बनाम राज कुमार ***जे टी*** **(2001) 1 एससी 336;** *हिंदुस्तान मोटर्स लिमिटेड बनाम तपन कुमार भट्टाचार्य और अन्य,* **(2002) 6 एससीसी 41;** *इण्डियन रेल्वे कन्स्ट्रक्सन कंपनी लि. बनाम अजय कुमार,* **(2003) 4 एससीसी 579;** एमपी स्टेट इलेक्ट्रीसीटी बोर्ड बनाम जरीना बी *(श्रीमती),* **(2003) 6 एससीसी 141;** *केन्द्रीय विद्यालय संगठन एवं अन्य. बनाम एस. सी. शर्मा,* **(2005) 2 एससीसी 363,** पर आधारित।

3. प्रकरण के पृष्ठभूमि तथ्यों को ध्यान में रखते हुए, यह एक उपयुक्त प्रकरण है जहां अधिनियम की धारा 33(2)(ख) के संदर्भ में कार्रवाई करने की स्वतंत्रता दी जा सकती है। अपीलकर्ता, चाहे तो, अधिनियम की धारा 33(2)(ख) के अनुसार कार्रवाई कर सकता है। (पैरा 13) (503-ई)

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार: 2006 की सिविल अपील संख्या 2001

गुवाहाटी उच्च न्यायालय की 2004 की रिट अपील संख्या 345 में पारित अंतिम निर्णय व आदेश दिनांक 05.04.2005 से

ध्रुव मेहता, हर्षवर्धन झा और यशराज सिंह देवड़ा (मैसर्स के.एल. मेहता एंड कंपनी) अपीलार्थी के लिए।

गोपाल प्रसाद प्रत्यर्थी के लिये।

न्यायालय का निर्णय दिया गया।

डॉ. अरिजीत पसायत, न्यायमूर्ति द्वारा

1. इस अपील में, गुवाहाटी उच्च न्यायालय की खण्डपीठ के निर्णय जिसमें अपीलार्थी के द्वारा पेश की गई रिट अपील को खारिज कर दिया, को चुनौती दी गई है। उक्त रिट अपील द्वारा अपीलकर्ता-बैंक ने विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा दिए गए निर्णय की शुद्धता को प्रश्नगत किया था, जिन्होंने यह अभिनिर्धारित किया था कि अपीलार्थी की ओर से औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 (संक्षेप में 'अधिनियम') की धारा 33(2)(ख) के तहत आवेदन पेश करने में लोप के कारण बर्खास्तगी का आदेश शून्य था।

2. अनावश्यक विवरण के बिना पृष्ठभूमि तथ्य इस प्रकार हैंः

प्रत्यर्थी-सिद्धार्थ चक्रबर्ती गुवाहाटी में उलुबरी शाखा में अपीलार्थी-बैंक के वाणिज्यिक विंग में कैश क्लर्क के रूप में कार्यरत था। अनियमितताओं के लिए उनके विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्यवाही शुरू की गई थी और तदनुसार, कुछ बचत-बैंक खातों में फर्जी नामे प्रविष्टियां करने,

परिणामस्वरूप गबन हुआ, से संबंधित विभिन्न मामलों में उन्हें आरोप पत्र दिया गया। विभागीय कार्यवाही के समापन पर-जांच के निष्कर्षों को स्वीकार करते हुए, प्रत्यर्थी को आदेश दिनांक 20.12.1985 के द्वारा सेवा से बर्खास्त कर दिया गया। बर्खास्तगी आदेश में यह इंगित किया गया था कि सहायक श्रम आयुक्त, सेंट्रल कोलकाता के समक्ष औद्योगिक विवाद के लंबित रहने के मद्देनजर अपीलार्थी बैंक के द्वारा की गयी कार्यवाही के अनुमोदन के लिये अधिनियम की धारा 33(2)(ख) के अंतर्गत आवेदन दायर किया जा रहा था। प्रत्यर्थी ने बर्खास्तगी के आदेश की वैधता और मान्यता को चुनौती देते हुए पूर्ण बकाया मजदूरी के साथ अपनी बहाली के लिए क्षेत्रीय श्रम आयुक्त (केंद्रीय), गुवाहाटी के समक्ष एक औद्योगिक विवाद उठाया। अंतत्वोगत्वा, सुलह कार्यवाही की विफल होने पर, भारत सरकार के श्रम मंत्रालय ने अधिनियम की धारा 10 में प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए मामले को औद्योगिक न्यायाधिकरण, गुवाहाटी को निर्देशित कर दिया। उक्त निर्देश अधिनियम की धारा 33(2)(ख) के प्रावधानों का अनुपालन न करने के लिए श्रम न्यायालय में कार्यवाही लंबित रहने तक बर्खास्तगी के आदेश की मान्यता और वैधता के प्रश्न पर था। विद्वान न्यायाधिकरण ने कार्यवाही के समापन पर अभिनिर्धारित किया कि जांच निर्धारित प्रक्रियाओं और प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के पूर्ण अनुपालन में थी, और इसलिए, गबन व अनियमितताओं की श्रृंखलाओं को देखते हुए बर्खास्तगी का अधिरोपित दण्ड न्यायोचित है। व्यथित, प्रत्यर्थी ने औद्योगिक न्यायाधिकरण के पीठासीन अधिकारी के द्वारा रेफरेंस

प्रकरण संख्या 12(सी)/1997 में पारित अधिनिर्णय दिनांक 20.01.2000 का विरोध करते हुये रिट याचिका सं. 635/2001 प्रस्तुत की।

3. विद्वान एकल न्यायाधीश के समक्ष एकमात्र प्रश्न उठाया गया था कि अपीलार्थी-बैंक ने वास्तव में प्रत्यर्थी को बर्खास्त करने में कार्यवाही पर अनुमोदन के लिये अधिनियम की धारा 33(2)(ख) के तहत आवेदन दायर किया था। अपीलार्थी-बैंक का यह तर्क था कि यह आवश्यक नहीं था, क्योंकि अधिनियम की धारा 33(2)(ख) के प्रावधान आज्ञापक नहीं थे तथा यह इस न्यायालय के निर्णय *मेसर्स पंजाब बेवरेजेज प्राइवेट लिमिटेड चंडीगढ़ बनाम सुरेशचन्द्र व अन्य (1978) 2 एसएससी 144* पर आधारित है। विद्वान एकल न्यायाधीश ने इस न्यायालय के पश्चात्वर्ती निर्णय *जयपुर जिला सहकारी भूमि विकास बैंक लिमिटेड बनाम राम गोपाल शर्मा (2002) 2 एससीसी 244* का अवलम्बन लेते हुये अभिनिर्धारित किया कि *पंजाब बेवरेजेज* के प्रकरण (उपर्युक्त) का निर्णय *जयपुर जिला प्रकरण* (उपर्युक्त) के निर्णय द्वारा रद्द कर दिये जाने के कारण लागू नहीं है।

4. अपीलार्थी का रूख यह था कि भावी अधिनिर्णय का सिद्धान्त लागू होगा, जो कि *पंजाब बेवरेजेज* के मामले (उपर दिये अनुसार) में पारित निर्णय जब कार्यवाही की गई, उस समय प्रभावी था। इस तर्क को विद्वान एकल न्यायाधीश के द्वारा नकारा गया, जिनके द्वारा प्रत्यर्थी द्वारा प्रस्तुत की गई रिट आवेदन को स्वीकार किया था। खण्डपीठ ने अभिनिर्धारित किया कि विद्वान एकल न्यायाधीश के द्वारा रिट याचिका को स्वीकार करना

न्यायोचित था।*जयपुर जिला प्रकरण* (उपर्युक्त) में इस बात का कोई संकेत नहीं था कि भावी अधिनिर्णय का सिद्धान्त लागू किया गया। विद्वान एकल न्यायाधीश का आदेश, कि प्रत्यर्थी पूर्ण बकाया मजदूरी के साथ बहाली का हकदार है, बरकरार रखा गया।

5. अपीलार्थी-बैंक के विद्वान अधिवक्ता ने विद्वान एकल न्यायाधीश एवं खण्डपीठ के समक्ष अपनाये गये रूख को अपनाया। नोटिस की तामील के बावजूद प्रत्यर्थी उपस्थित नहीं हुआ।

6. *जयपुर जिला* के मामले (उपर्युक्त) में अन्य बातों के साथ-साथ इस प्रकार देखा गयाः

> "13 धारा 33(2)(ख) के प्रावधान का परन्तुक, जैसा कि इसकी असंदिग्ध व स्पष्ठ भाषा से देखा जा सकता है, आज्ञापक है। इसके अतिरिक्त धारा 33 के उद्देश्य और धारा 33 (2)(ख) के परन्तुक के संदर्भ में, यह स्पष्ट है कि उक्त परंतुक में निहित शर्तों का अनिवार्य रूप से अनुपालन किया जाना है। इसके अलावा, कोई भी नियोक्ता जो धारा 33 के प्रावधानों का उल्लंघन करता है, वो धारा 31(1) के तहत कारावास जिसकी अवधि छह माह तक हो सकेगी या जुर्माना जो 1000 रुपये तक हो सकेगा अथवा दोनों से, को आमंत्रित करता है। यह दंडात्मक प्रावधान फिर से उसमें बताई गई शर्तों का पालन करने के लिए परंतुक की आज्ञापक प्रकृति

का एक संकेतक है। इसे दूसरे तरीके से कहे तो, उक्त शर्तों का आज्ञापक होने के कारण, संतुष्ट किया जाना चाहिये, यदि धारा 33(2)(ख) के तहत पारित उन्मोचन या बर्खास्तगी का पारित आदेश क्रियान्वित होना हो। यदि कोई नियोक्ता किसी कर्मचारी का उन्मोचन या बर्खास्तगी का आदेश पारित करने के लिए उक्त प्रावधान का लाभ लेना चाहता है, उसे उक्त परंतुक में उस पर लगाए गए वैधानिक दायित्व के निर्वहन का भार भी उठाना होगा। इसके विपरीत दृष्टिकोण अपनाने से कि परंतुक में निहित आज्ञापक शर्तों के उल्लंघन में नियोक्ता द्वारा पारित उन्मोचन या बर्खास्तगी का आदेश ऐसे आदेश को निष्क्रिय या शून्य नहीं बनाता है, परंतुक के मूल उद्देश्य को विफल कर देगा और यह अर्थहीन हो जाता है। निर्वचन का यह सुस्थापित सिद्धान्त है कि विधान के किसी भी भाग को अनावश्यक या निरर्थक नहीं समझा जाएगा। नियोक्ता के द्वारा परन्तुक को कमजोर या अवज्ञा नहीं किया जा सकता है। वह आज्ञापक प्रावधान की अवज्ञा नहीं कर सकता और फिर यह कह सकता कि धारा 33(2)(ख) के उल्लंघन में उन्मोचन या बर्खास्तगी का वह आदेश शून्य व निष्क्रिय नहीं है। उसे अपनी गलती का फायदा उठाने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। विधान की व्याख्या ऐसी होनी चाहिए जो विधायी मंशा को आगे बढ़ाए

और उस उद्देश्य को पूरा करे जिसके लिए इसे बनाया गया है, न कि उसे विफल करे। धारा 33(2)(ख) का परन्तुक एक कर्मकार को उसके हितों की रक्षा के लिए सुरक्षा प्रदान करता है और यह औद्योगिक विवाद के लंबित रहने के दौरान नियोक्ता द्वारा उत्पीड़न और अनुचित श्रम व्यवहार के खिलाफ एक ढाल है, जब उनके बीच संबंध पहले से ही तनावपूर्ण हैं। नियोक्ता को पहले से लंबित औद्योगिक विवाद से असंबंधित किसी भी कथित कदाचार के लिए उक्त परन्तुक में निहित शर्तों का पालन किए बिना किसी कर्मकार को सेवा से हटाने के लिये धारा 33(2)(ख) के प्रावधान का उपयोग करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। उक्त प्रावधान के तहत किसी कर्मकार को दी गई सुरक्षा को नहीं छीना जा सकता है। यदि यह माना जाए कि नियोक्ता द्वारा उक्त परंतुक की आवश्यकताओं का अनुपालन किए बिना पारित किया गया उन्मोचन या बर्खास्तगी का आदेश शून्य या निष्क्रिय नहीं है, तो नियोक्ता किसी कर्मकार को दंडमुक्ति के साथ उन्मोचन या बर्खास्त कर सकता है।''

7. जैसा कि उक्त निर्णय में उल्लेख किया गया है, अधिनियम की धारा 33(2)(ख) का परन्तुक एक कर्मकार को उसके हितों की रक्षा के लिए सुरक्षा प्रदान करता है और यह औद्योगिक विवाद के लंबित रहने के दौरान

नियोक्ता द्वारा उत्पीड़न और अनुचित श्रम व्यवहार के खिलाफ एक ढाल के रूप में है। ऐसा होने पर, खण्डपीठ द्वारा पुष्ट किये गये विद्वान एकल न्यायाधीश के निर्णय में कोई दुर्बलता नहीं है।

8. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा एक वैकल्पिक तर्क उठाया गया, उनके द्वारा कहा गया कि विद्वान एकल न्यायाधीश और खण्डपीठ के द्वारा पूर्ण बकाया मजदूरी के भुगतान का निर्देश देना न्यायोचित नहीं था। इस तर्क पर विचार करने की आवश्यकता है।

9. *पी.जी.आई. मेडिकल एजूकेशन एण्ड रिसर्च, चंडीगढ़ बनाम राज कुमार जे टी (2001) 1 एससी 336,* के मामले में इस न्यायालय ने उच्च न्यायालय के द्वारा श्रम न्यायालय का अधिनिर्णय, जिसमें बकाया मजदूरी 60 प्रतिशत तक सीमित करने का था, को अपास्त करने तथा पूर्ण बकाया मजदूरी का भुगतान करने का निर्देश देने को, गलत पाया। यह इस प्रकार देखा गया:

> "श्रम न्यायालय तथ्यों का अंतिम न्यायालय होने के कारण इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि 60 प्रतिशत मजदूरी का भुगतान विधि की आवश्यकताओं का अनुपालन करेगा। न्यायाधिकरण या श्रम न्यायालय के निष्कर्ष को नकारने के लिये, विकृति या अशुद्ध होने या विधि के अनुसार नहीं होने का निष्कर्ष कारणों के साथ आदेश में लेखबद्ध करना होगा। उच्च न्यायालय को मामले के तथ्यात्मक पहलुओं पर नहीं जाना

चाहिये तथा इस संबंध में उच्च न्यायालय की एक मौजूदा सीमा है।"

10. पैराग्राफ 12 में फिर से, इस न्यायालय ने अवलोकन किया:

> "बकाया मजदूरी के भुगतान में विवेकाधिकार तत्व शामिल है, जिसे प्रत्येक मामले के तथ्यों व परिस्थितियों के अनुसार निपटाया जाना चाहिये तथा स्ट्रेटजैकेट फॉर्मूला विकसित नहीं किया जा सकता है, यद्यपि इसके बावजूद भी यहां पर बकाया मजदूरी का संपूर्णता में भुगतान का निर्देश देने की वैधानिक मंजूरी है।"

11. इस स्थिति को *हिंदुस्तान मोटर्स लिमिटेड बनाम तपन कुमार भट्टाचार्य और अन्य, (2002) 6 एससीसी 41, इंडियन रेलवे कंस्ट्रक्शन कंपनी लिमिटेड बनाम अजय कुमार (2003), 4 एससीसी 579, एम.पी. स्टेट इलेक्ट्रीसीटी बोर्ड बनाम जरीना बी (श्रीमती) (2003) 6 एससीसी 141* और *केन्द्रीय विद्यालय संगठन और अन्य बनाम एस.सी. शर्मा, (2005) 2 एससीसी 363* में दोहराया गया था।

12. मामले के विशिष्ट तथ्यों और उस पृष्ठभूमि को ध्यान में रखते हुए जिसमें प्रत्यर्थी के विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्रवाई की गई थी, और बर्खास्तगी का आदेश पारित होने के प्रासंगिक समय पर कानून की स्थिति

के अनुसार, बकाया मजदूरी की मात्रा दो लाख रुपये तक सीमित है, को आज से चार सप्ताह की अवधि के भीतर भुगतान किया जावे। यदि कोई राशि पहले ही भुगतान की जा चुकी है, तो उसे भुगतान की जाने वाली निर्देशित राशि में से काट ली जायेगी।

13. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने यह भी निवेदन किया कि बैंक को अधिनियम की धारा 33(2)(ख) की शर्तों के अनुसार कार्यवाही करने की स्वतंत्रता दी जावे। न तो विद्वान एकल न्यायाधीश और न ही खंडपीठ ने ऐसी स्वतंत्रता देने की वांछनीयता पर विचार किया है। ऊपर बताए गए पृष्ठभूमि तथ्यों को ध्यान में रखते हुए, हमें लगता है कि यह एक उपयुक्त मामला है जहां ऐसी स्वतंत्रता दी जा सकती है। दूसरे शब्दों में, यदि अपीलार्थी को, इस तरह की सलाह दी जाती है, तो वह अधिनियम की धारा 33(2)(ख) के संदर्भ में कार्यवाही कर सकेगा।

14. अपील उपरोक्त सीमा तक बिना हर्जे के आदेश के साथ स्वीकार की गई।

अपील आंशिक रूप से स्वीकार की गई।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल '**सुवास**' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी मधुसूदन मिश्रा (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।